International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

बौद्ध स्तूपों का सांस्कृतिक एवं पर्यटन महत्व

Dr. Ambika bajpai
Professor, Ancient Indian History,Navyug Kanya Mahavidyalaya,
Lucknow
Email: ambika.bajpai1977@gmail.com

स्तूप बौद्ध धर्म से संबंधित वह पवित्र स्मारक हैं ,जो बुद्ध के प्रबुद्ध मन, संपूर्ण ब्रह्मांड व शांति के मार्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । बौद्ध धर्म में सर्वाधिक महत्वपूर्ण और पूजनीय, बुद्ध तथा अन्य बौद्ध अर्हतों के शारीरिक अवशेष माने गए हैं , जिन पर बनाई गई समाधि जैसी संरचना या वास्तु को "स्तूप" कहा जाता है। संस्कृत का स्तूप शब्द पालि का 'थूप' व हिंदी का 'थूहा' है। श्रीलंका में इसे 'दागोबा' के रूप में जाना जाता है , जो स्तूप में संग्रहित शारीरिक अवशेष वाला भाग होता है। वैसे तो स्तूप एक बौद्ध संरचना मानी जाती है परंतु इसकी परंपरा बुद्ध तथा बौद्ध धर्म से भी पुरानी है । स्तूप एक अर्ध गोलाकार संरचना होती है जिसके अनेक अंग जैसे- हार्मिका ,वेदिका , तोरण आदि होते हैं । स्तूपों के अनेक प्रकार होते हैं ।भारत स्तूप निर्माण की जन्मस्थली है। भारत के अतिरिक्त अनेक एशियाई देशों जैसे नेपाल, थाईलैंड , तिब्बत, म्यांमार, इंडोनेशिया, श्रीलंका, जापान आदि में भी स्तूप वस्तु को देखा जा सकता है ।

बौद्ध स्तूपों का भारतीय दर्शन व पर्यटन के क्षेत्र में बहुत महत्व है ।यह बौद्ध आध्यात्मिकता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण केंद्र बिंदु है । तीर्थ यात्रा व ध्यान के स्थान के रूप में इनका महत्व सर्वाधिक है। ये स्तूप धर्म के साथ-साथ कला का भी अद्भुत स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। इनका वास्तु , भारतीय कला के अध्ययन का एक विलक्षण पक्ष है । इनकी अलंकृत वेदिकाएं व तोरण द्वार, जातक कथाओं व बुद्ध के जीवन के दृष्टांतों का दृश्यांकन प्रस्तुत करते हैं । अतः इन स्तूपों का कला पक्ष भी बहुत महत्वपूर्ण है। ये पर्यटन के दृष्टिकोण से भी बहुत महत्वपूर्ण हैं । इस शोध पत्र में इन बौद्ध स्तूपों के सांस्कृतिक स्थलों के महत्व व समकालीन पर्यटन के महत्व पर विस्तार से चर्चा की गई है । पर्यटन के दृष्टिगत प्रतिवर्ष असंख्य भारतीय व विदेशी पर्यटक इन स्तूपों का भ्रमण करते हैं, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था काफी विकसित होती है ,जो आर्थिक विकास की गति को तीव्र करती है। इनके सांस्कृतिक व आर्थिक महत्व के कारण ही अनेक स्तूपों के संरक्षण के अथक प्रयास किया जा रहे हैं और संयुक्त राष्ट्र संघ की संस्था यूनेस्को द्वारा अनेक स्तूपों को अपनी विश्व विरासत सूची में स्थान देते हुए अद्यतन वर्ष 2026 में सारनाथ के बौद्ध स्थलों को अपनी सूची में शामिल किया गया है जिसमें धमेख व चौखंडी स्तूप भी सम्मिलित हैं ।

Key words-- हर्मिका, प्रदक्षिणा पथ, धमेख, दागोबा विरासत सूची ।।

प्राचीन भारतीय कला में बौद्ध स्तूपों का विशिष्ट स्थान है । स्तूप वस्तुतः एक मृतक स्मारक है, जिसका प्रारंभ बहुत साधारण ढंग से हुआ। जिस स्थान पर किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति की अंत्येष्टि क्रिया संपन्न होती थी, वहां एक मिट्टी की वेदिका बना दी जाती थी । इस स्थान पर पीपल का एक वृक्ष लगाने की भी प्रथा थी । सामान्य अर्थ में स्तूप मिट्टी या किसी अन्य पदार्थ के ढेर को कहते हैं । स्तूप शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'स्तुप' धातु से मानी गई है । जिसका अर्थ है स्तुति करना । विद्वानों का विचार है कि स्तूप शब्द संस्कृत की स्तूप धातु से निकला है जिससे हिंदी का शब्द तोपना बना है । तोपना का अर्थ है ढकना अर्थात मिट्टी से ढकने की क्रिया के कारण ही इसकी संज्ञा स्तूप दी गई । पालि साहित्य में स्तूप शब्द का रूप थूहा है ।

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

स्तूप अपने मूल रूप में अंत्येष्टि संस्कार से संबंधित था , जिसका प्रचलन बुद्ध के पूर्व भी था। बुद्ध तथा उनके अनुयायियों के भस्म अवशेषों को सुरक्षित रखने के लिए, बुद्ध के जीवन से संबंधित घटनाओं अथवा स्थलों को पूज्य बनाने के लिए तथा बुद्ध की प्राचीन खंडित मूर्तियों अथवा चिन्हों के ऊपर उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के उद्देश्य से जो स्मारक बनाए जाते थे उन्हें स्तूप की संज्ञा दी गई।

भारत में स्तूप की परंपरा बौद्ध धर्म के उदय के पूर्व भी थी वैदिक साहित्य में भी स्तूप शब्द का उल्लेख प्राप्त होता है परंतु वहां उसका संबंध मृतक संस्कार से नहीं है। ऋग्वेद में अग्नि की उठती हुई ज्वालाओं को स्तूप कहा गया है ऋग्वेद में ही सूर्य को "हिरण्य स्तूप" कहा गया है। हिरण्य स्तूप का शाब्दिक अर्थ सोने का ढेर या थूहा है , अतः सूर्य हिरण्य स्तूप है क्योंकि उसकी स्वर्णिम रश्मियाँ चतुर्दिक स्तूप के आकार में फैली रहती है।[1] द्युलोक के देव सविता की स्तुति करने वाले एक ऋषि का नाम भी हिरण्य स्तूप बताया गया है। स्तूप का संबंध महापुरुषों के साथ बुद्ध से पहले भी जोड़े जाने के उल्लेख मिलते हैं जिस प्रकार सूर्य अग्नि का विशाल स्तूप (पुंज) है , उसी प्रकार महापुरुषों का जीवन ज्ञान अथवा तेज का पुंज (स्तूप) होता है। बोधि ज्ञान के कारण बुद्ध सूर्य के समान प्रकाशमान समझ गए, अतः उनकी स्मृति अथवा उपासना के लिए स्तूप निर्माण का प्रचलन हुआ। वैदिक काल में मृतक को भूमि में गाड़ने की प्रथा थी। ऋग्वेद के एक मंत्र में पृथ्वी से प्रार्थना की गई है कि वह अपने गर्भ में शव को स्थान दें , उसकी मिट्टी अपने भार से सब को दबा ना दे।[2] बिहार के लौरियानंदनगढ़ में उत्खनन से सातवीं- आठवीं शताब्दी ईसा पूर्व का एक अलंकृत धातु पत्र प्राप्त हुआ है।[3] दुब्रिल ने मालाबार के उत्खनन में प्राप्त चट्टान खोदकर स्तंभ पर टिकी वर्तुलाकर समाधि को खोखला स्तूप ही माना है । इसी प्रकार की समाधियों का लॉन्गहर्स्ट और लागन आदि विद्वानों ने भी उल्लेख किया है। फेनोट आदि विद्वानों ने इन्हें उत्तर वैदिक काल का मानने में संदेह प्रकट किया है । अपने आरंभिक रूप में स्तूप केवल मृत्यु और मृतक के अवशेष से संबंधित थे । स्तूप के पर्यायवाची शब्दों से भी इस अर्थ का बोध होता है । संस्कृत के धातु गर्भ से बने दागबा, दागोवा और पगोड़ा शब्द जिनका प्रयोग स्तूप के लिए वर्मा और सिंघल में हुआ है, इसी अर्थ को व्यक्त करते हैं। धातु का अर्थ अस्थि या भस्म अवशेष होता है और जिस स्मारक में इन्हें रखा जाता है उसे धातु गर्भ कहते हैं। स्तूप के लिए प्रयुक्त '"चैत्य" शब्द भी इसका संबंध मृतक संस्कार से जोड़ता है। चिता से संबंधित स्थान पर बना होने के कारण इसे चैत्य भी कहते हैं।

प्राचीन बौद्ध अनुश्रुति के अनुसार गौतम बुद्ध के कुशीनगर में 80 वर्ष की अवस्था में महापरिनिर्वाण के पश्चात उनकी भस्मीभूत अवशिष्ट अस्थियों को मगध के शासक अजातशत्रु , वैशाली के लिच्छवि,कपिलवस्तु के शाक्य, अलकप्प के बुलिय, रामगाम के कोलिय, वेठद्वीप के ब्राह्मण , पावा के मल्ल तथा कुशीनगर के मल्ल इन 8 लोगों में द्रोण नामक ब्राह्मण ने बांट दिया था। प्रत्येक ने अपने-अपने अंश के ऊपर एक स्तूप का निर्माण करवाया था । पिप्पलीवन के मोरिय उस समय पहुंचे जब बुद्ध की शारीरिक धातु का बंटवारा हो चुका था, इसलिए उनको चिता भस्म से ही संतोष करना पड़ा । जिसके ऊपर उन्होंने एक स्तूप का निर्माण कराया। द्रोण नामक ब्राह्मण ने उस अस्थि कलश के ऊपर एक स्तूप का निर्माण कराया, जिसमें बुद्ध की अस्थियां चिता से इकट्ठा करके रखी गई थी और निकाल- निकाल कर बाटीं गई थी , इस प्रकार 10 स्तूपों का निर्माण हुआ। बौद्ध परंपरा के अनुसार अशोक ने प्राचीन स्तूपों से बुद्ध की शरीर धातु को निकलवा कर उसके ऊपर 84000 स्तूपों का निर्माण कराया था[4] यह वर्णन स्पष्टतः अतिरंजित है । सातवीं शताब्दी ईस्वी में भारत की यात्रा पर आने वाले चीनी यात्री ह्वेन सांग के अनुसार तक्षशिला ,श्रीनगर ,थानेश्वर, मथुरा ,कन्नौज, कौशांबी, श्रावस्ती ,कपिलवस्तु, कुशीनगर,

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

वाराणसी, वैशाली, और गया आदि स्थानों के अनेक नगरों में अशोक के द्वारा निर्मित स्तूप उसने देखे थे । सारनाथ का धर्मराजिका तथा भरहुत ,सांची एवं बोधगया के स्तूप मूलतः अशोक द्वारा बनवाए गए माने जाते हैं।[5] जिनके आकार को बाद में ईंटों और पत्थरों से ढकवा कर परवर्ती शासको ने नवीन स्वरूप प्रदान किया। सारनाथ के स्तूप की समूची वेदिका एक ही पत्थर की शिला को तराश कर बनाई गई थी ।

भारतीय कला में स्तूप का जितना प्रदर्शन है, हर जगह उसकी पूजा का क्रम दिखाया गया है विद्वानों का कहना है कि स्तूप पूजा की परंपरा अशोक के समय से प्रारंभ हुई ॥ भगवान बुद्ध के चार प्रतीक चिन्ह थे जन्म का प्रतीक , हाथी द्वारा प्रदर्शित ,ज्ञान का प्रतीक बोधिवृक्ष द्वारा प्रदर्शित धर्म चक्र का प्रतीक ,चक्र द्वारा प्रदर्शित ,परिनिर्वाण का प्रतीक स्तूप द्वारा प्रदर्शित है । स्तूप का संबंध परिनिर्वाण अर्थात मृत्यु से लगना स्वाभाविक था । दाह संस्कार के बाद शव की राख को भस्म पत्र में रखकर स्तूप बनाए जाते थे । हीनयानी प्रतीक के आधार को ही पूजा समझते थे । अशोक के समय में बौद्ध मत ही राजकीय धर्म था । इसी कारण उसने बुद्ध के प्रतीक को अपनाया । अशोक के पहले जो स्तूप बने थे उनके अवशेषों को भी निकलवाकर अशोक ने नए स्तूपों का निर्माण करवाया ऐसा विवरण हियूनसॉन्ग ने दिया है । अशोक ने 84 हजार स्तूपों का निर्माण करवाया था । अशोक ने स्तूप पूजा का विस्तार करके इसके मध्य में वृद्धि की इसी कारण अशोक के बाद भी स्तूप पूजा का प्रसार होता गया । भरहुत , बोधगया, अमरावती की वेदिकाओं पर उत्कीर्ण प्रदर्शनों में स्तूप पूजा देखी जा सकती है । सांची के तोरणों पर पशु-पक्षी और मानव सभी स्तूप पूजा करते दिखाई देते हैं। विहार में भिक्षु लोग चैत्य में ही स्तूप की पूजा करते थे । भाजा,पीतलखोरा और नासिक में इस प्रकार के स्तूप गुफाओं में स्थित है । उपासक एक द्वार से चैत्य में प्रवेश करते स्तूप की पूजा तथा परिक्रमा करके दूसरे द्वार से बाहर निकलते थे । स्तूप के स्थान ने ही आगे चलकर गर्भगृह का रूप ले लिया,जिस स्थान पर प्रतिमा की प्रतिष्ठा की जाने लगी।

लिटरेचर रिव्यू

बौद्ध स्तूप भारतीय सांस्कृतिक विरासत ,धार्मिक आस्था तथा पर्यटन के महत्वपूर्ण केंद्र रहे हैं । विभिन्न शोधकर्ताओं ने उनके ऐतिहासिक, स्थापत्य, सांस्कृतिक तथा पर्यटन संबंधी महत्व का अध्ययन किया है । सर जान मार्शल ने सांची स्तूप के स्थापत्य एवं कला पर विस्तृत अध्ययन किया और बताया कि सांची भारतीय बौद्ध कला एवं वास्तुकला का उत्कृष्ट उदाहरण है । अलेक्जेंडर कनिंघम ने सांची, सारनाथ, भरहुत तथा अन्य बौद्ध स्थलों के पुरातात्विक सर्वेक्षण के माध्यम से यह सिद्ध किया कि स्तूप प्राचीन भारत के सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन के केंद्र थे । देवला मित्रा ने प्राचीन भारतीय स्तूपों के क्रमिक विकास का विवरण प्रस्तुत करते हुए अनेक स्तूपों का तुलनात्मक अध्ययन किया । आनंद कुमार स्वामी व बेंजामिन रोलैन्ड ने स्तूपों को भारतीय दर्शन, कला और आध्यात्मिकता का संगम बताते हुए बौद्ध प्रतीकों का विश्लेषण प्रस्तुत किया । ए. स्नोड ग्रास ने अपनी पुस्तक ' द सिंबॉलिज्म ऑफ़ द स्तूप' में स्तूप को बौद्ध ब्रह्मांड विज्ञान का प्रतीक माना। संयुक्त राष्ट्र संघ की संस्था यूनेस्को ने सांची स्तूप का गहन विश्लेषण करते हुए बताया कि बौद्ध स्मारक मानवता की साझा सांस्कृतिक धरोहर है । यूनेस्को ने रेखांकित किया कि संरक्षण और सतत पर्यटन साथ-साथ चलने चाहिए। अनेक विद्वानों ने बौद्ध स्मारकों में स्तूपों के पर्यटन महत्व पर भी गहन चिंतन किया। इनमें किरण ए शिंदे का अध्ययन महत्वपूर्ण है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि भारत का बौद्ध सर्किट धार्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इंदर सिंह व अनुज कुमार ने भारत में बौद्ध पर्यटन के विकास में सरकार, तकनीक व बौद्ध सर्किट की भूमिका का

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

अध्ययन करते हुए बताया कि डिजिटल प्रचार ,परिवहन सुविधा और पर्यटन नीतियां बौद्ध पर्यटन को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण है।

मौर्य युगीन बौद्ध मतावलंबी दीर्घ शासन काल के उपरांत शुंग काल में सनातन हिंदू धर्म को पुनः प्रतिष्ठित किया गया, परंतु इस काल में भी कुछ हिंदू वास्तु स्मारकों के अतिरिक्त सभी महत्वपूर्ण पुरावशेष बौद्ध धर्म संबंधित ही पाए गए हैं। इससे स्पष्ट होता है कि इस काल में भी बौद्ध धर्म को सत्ता का पर्याप्त संरक्षण प्राप्त था । शुंग सातवाहन युग में भारतीय स्तूप एवं शैलकृत चैत्यों की संरचना एवं स्थापत्य को प्राथमिकता प्रदान की गई। महात्मा बुद्ध के महापरिनिर्वाण के समय जब उनके शिष्य आनंद ने पूछा कि हम किस प्रकार तथागत के शरीर या धातुओं का सम्मान करें,तब बुद्ध ने कहा कि जिस प्रकार से चार मार्गों को काटने के स्थान पर चक्रवर्ती सम्राट के लिए स्तूप बनाए जाते हैं उसी प्रकार तथागत के लिए भी स्तूप बनवाना चाहिए। इसी कारण स्तूप का संबंध बौद्ध धर्म और बौद्ध कला से जोड़ा गया ।

सांची तोरण के दक्षिणी और पश्चिमी तोरण द्वार की बड़ेरियों पर दृश्य खुदे हैं, जिसमें आठ हाथियों के सिर पर भस्म पात्र रखा है और पीछे महावत बैठा है । इस प्रदर्शन का इतिहास बौद्ध साहित्य में मिलता है । बुद्ध का महापरिनिर्वाण कुशीनगर में हुआ । दाह संस्कार के बाद मल्लों ने भस्म पर अधिकार कर लिया । बौद्ध परंपरा के अनुसार बुद्ध के महापरिनिर्वाण के बाद उत्तर भारत के तत्कालीन शासको और एक ब्राह्मण ने अवशिष्ट अस्थियों तथा भस्म आदि के आठ भाग किये तथा अपने-अपने भाग के ऊपर प्रत्येक ने एक-एक स्तूप का निर्माण कराया । विनय पिटक के महापरिनिर्वाण सूत्र में इन स्तूप के निर्माताओं का उल्लेख मिलता है । इस संदर्भ में यह भी उल्लेख मिलता है कि पिपलीवन के मोरिय कुशीनारा तब पहुंचे जब अवशिष्ट अस्थियों का बटवारा हो चुका था, इसलिए उनको चिता भस्म से ही संतोष करना पड़ा जिस पर मोरिय लोगों ने एक स्तूप का निर्माण कराया । द्रोण नामक उस ब्राह्मण ने जिसने आठ दावेदारों के आपसी संघर्ष को टालकर उनमें से प्रत्येक को एक-एक भाग लेने के लिए सहमत किया था उसने उस अस्थि कलश के ऊपर एक स्तूप का स्वयं निर्माण कराया था । यह 10 स्तूप बुद्ध की मृत्यु के बाद तुरंत अस्तित्व में आ गए । धातु पात्र (धातु गर्भ) होने के कारण स्तूप धीरे-धीरे गौतम बुद्ध के प्रतीक माने जाने लगे और बौद्ध धर्म के अनुयायियों की स्तूप के प्रति भक्ति भावना बढ़ती गई । इसका परिणाम यह हुआ कि बुद्ध की शरीर धातु भस्म ,केश, दांत आदि के अतिरिक्त बुद्ध द्वारा प्रयुक्त वस्तुओं जैसे भिक्षा - पात्र एवं वस्त्र आदि को रखने के लिए भी स्तूपों का निर्माण किया गया । गौतम बुद्ध के जीवन की प्रमुख घटनाओं जन्म, संबोधि, धर्मचक्र प्रवर्तन तथा निर्वाण से संबंधित स्थान पर भी स्तूपों का निर्माण होने लगा । कालांतर में ऐसे छोटे-छोटे स्तूप निर्मित हुए जिनमें किसी प्रकार की शरीर धातु अथवा अवशेष नहीं थे किंतु गौतम बुद्ध का प्रतीक मानकर उनकी पूजा की जाती थी।

स्तूप का वर्गीकरण स्तूप के चार प्रमुख भेद माने गए[5] --

1. शारीरिक स्तूप
2. पारिभौगिक स्तूप
3. उद्देशिक स्तूप
4. पूजार्थक स्तूप

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

शारीरिक स्तूप सबसे प्रधान है, जिनमें गौतम बुद्ध के शरीर धातु ,केश ,दांत आदि रखे गए थे । यह शारीरिक स्तूप कहलाए । बुद्ध के प्रमुख शिष्यों सारिपुत्र, मोग्गलान एवं आनंद आदि तथा प्रमुख आचार्य एवं भिक्षुओं के शारीरिक अवशेषों के ऊपर जो स्तूप बने उन्हें इस श्रेणी में रख सकते हैं । भारत के विभिन्न भागों में स्थित स्तूपो के ध्वंसावशेषों का उत्खनन करने पर अस्थि अवशेष और भस्म आदि अस्थि कलशों में भरे हुए मिले हैं किंतु कुछ ही अस्थि कलशो में नाम अंकित मिलते हैं । उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में पिपरहवा के उत्खनन से जो अस्थि कलश मिला है उसमें द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व की ब्राह्मी लिपि में एक संक्षिप्त अभिलेख अंकित मिला है । सांची के स्तूप संख्या दो से दो प्रस्तर के अस्थि कलश मिले हैं जिनमें 10 बौद्ध भिक्षुओं के नाम अंकित मिले हैं ।

परिभौगिक स्तूप दूसरा प्रमुख प्रकार है जिसमें गौतम बुद्ध द्वारा उपयोग की गई वस्तुओं को रखने के लिए स्तूप बनाए गए । दीक्षापात्र ,चीवर एवं संघाटी तथा पादुकाओं आदि की गणना इन वस्तुओं में की जा सकती है । सातवीं शताब्दी ईस्वी में भारत की यात्रा पर आने वाले चीनी यात्री वेनसॉन्ग ने इस प्रकार के अनेक स्तूपों का उल्लेख किया है ।

उद्देशिक स्तूप गौतम बुद्ध के जीवन से संबंधित घटनाओं की स्मृति से जुड़े स्थानों पर स्मारक के रूप में बनाए गए हैं । बुद्ध के जीवन की घटनाओं से जुड़े स्थान अनेक थे और इनमें से कई बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध केन्द्रों के रूप में विकसित हुए । आनंद नामक शिष्य के पूछने पर की तथागत के निर्वाण के बाद जिन वस्तुओं एवं स्थानों का दर्शन तथा पूजन किया जाएगा । गौतम बुद्ध ने चार पवित्र स्थानों का स्वयं उल्लेख किया था । आनंद के प्रश्न के उत्तर में बुद्ध ने कहा था कि लुंबिनी, जहां तथागत का जन्म हुआ था, बोधगया, जहां पर ज्ञान प्राप्त किया गया था, सारनाथ , जहां पर धर्मचक्र प्रवर्तन किया था और कुशीनगर जहां पर बाद में बुद्ध का महापरिनिर्वाण हुआ, प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं। इन चारों स्थलों को बौद्ध धर्म के अनुयायियों ने स्तूपों आदि विविध प्रकार के स्मारकों से सुसज्जित किया । यह चारों स्थल आज भी विश्व भर में बौद्ध धर्मावलंबियों द्वारा पवित्र माने जाते हैं । इनके अलावा चार अन्य स्थान भी बुद्ध के जीवन की घटनाओं से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे। उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में स्थित संकिसा जहां पर बुद्ध 'त्रयस्त्रिंश स्वर्ग 'से अवतरित हुए थे , उत्तर प्रदेश के बहराइच जिले में स्थित श्रावस्ती , जहां पर बुद्ध ने अपने विरोधियों को पराजित करने के लिए चमत्कार प्रदर्शन किया था । बिहार के गया जिले में स्थित राजगृह , जहां पर नलगिरि नामक मतवाले हाथी को वश में किया था और बिहार के वैशाली जिले में स्थित वैशाली जहां पर बंदरों ने गौतम बुद्ध को शहद अर्पित किया था । इन चारों स्थान पर भी अनेक उद्देशिक स्तूप कालांतर में निर्मित हुए । इन आठ प्रमुख घटनाओं से जुड़े होने के कारण यह आठ स्थान अष्ट महास्थानानि के नाम से प्रसिद्ध हुए । इन ऑठों घटनाओं का बौद्ध कला में अंकन मिलता है । भारत आने वाले चीनी यात्रियों फाहियांन और व्हेनसॉन्ग ने अनेक उद्देशिक स्तूपों को स्वयं देखा था , जिनका उल्लेख इन दोनों यात्रियों ने यात्रा वृतांतों में किया था ।

पूजार्थक स्तूप अपेक्षाकृत छोटे आकार के बनाए जाते थे ।[8] इस प्रकार के स्तूप बहुत बड़ी संख्या में प्रत्येक तीर्थ स्थान पर संपन्न बौद्ध तीर्थ यात्रियों द्वारा बनवाए गए । अधिकांश पूजार्थक स्तूप एकाश्मक है । महायान बौद्ध धर्म के प्रभाव के फलस्वरुप बुद्ध तथा बौद्ध देवी देवताओं की प्रतिमाएं पूजार्थक स्तूपों के आलों में बनाई जाती थी । सातवीं शताब्दी के अंतिम चरण में भारत आने वाले चीनी यात्री इत्सिंग ने इस परंपरा का उल्लेख किया है । उसके अनुसार इस प्रकार के पूजार्थक स्तूपों का निर्माण कार्य बौद्ध भिक्षु तथा उपासकों दोनों में लोकप्रिय था । लोगों का ऐसा विश्वास था इस प्रकार के स्तूपों के निर्माण से अनंत

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

पुण्य प्राप्त होगा । जो निर्धन तीर्थ यात्री पूजार्थक स्तूप का निर्माण नहीं कर सकते थे वे मिट्टी तथा पत्थर की पटिट्काओं पर धार्मिक मंत्र अंकित कराने के बाद दान करते थे ।

अशोक से पूर्व के स्तूपों का ज्ञान पुरातात्विक आधार पर लौरिया नंदनगढ़ से होता है ।पिपरहवा का स्तूप भी इसी काल से संबंधित है । पिपरहवा स्तूप लोरियानंदनगढ़ के स्तूप के बाद का है जो बुद्ध के महापरिनिर्वाण कुछ काल बाद का बना है। अशोक के समय साधार मेधि युक्त स्तूप बनने लगे थे। यह कच्ची ईंटों या मिट्टी के बने होते थे जिसे ऊपर से पक्की ईंटों की जुड़ाई से ढक देते थे। शुंग काल में इनका आकार बड़ा हुआ और इस के ऊपर पक्की ईटों की चौड़ाई पर पत्थर की पटिया बिछा दी जाती थी।

स्तूप का विकास संभवत मिट्टी के गोल चबूतरे से हुआ । प्रारंभिक स्तूप आकार में अर्ध गोलाकार अथवा उल्टे कटोरा की तरह मिलते हैं , जिनके आधार के चारों ओर एक घेरा होता था, जिसको वेदिका कहते थे । इसका निर्माण प्रारंभ में स्तूप की रक्षा के उद्देश्य से किया गया होगा ।शुंग सातवाहन और उसके बाद के कालों में स्तूपों में जो वेदिकाएं बनाई गई उनमें थोड़े-थोड़े अंतर पर स्तंभ खड़े किए जाते थे । दो खड़े स्तंभों में तीन क्षैतिजाकार सूचियां बनाई जाती थी । स्तंभों के ऊपर जो गोलाकार पत्थर लगाया जाता था उसको उष्णीय कहते थे ।

स्तूप की चारों दिशाओं में चार प्रवेश द्वार होते थे । प्रवेश द्वार को अलंकृत करने के लिए कालांतर में तोरण बनाए जाने लगे । प्रत्येक तोरण में लंबवत विशाल दो स्तंभ होते थे , जिनके ऊपर तीन धरणों अथवा बड़ेरियों को एक के ऊपर एक समानांतर दूरी पर क्षैतिजाकार रखा जाता था । प्रत्येक दो बड़ेरियों के बीच में छोटे-छोटे स्तंभ होते थे । बड़ेरियों को अलंकृत करने के लिए बौद्ध धर्म कथाओं का उत्कीर्णन मिलता है ।[9]

वेदिका तथा स्तूप के बीच में जो खाली स्थान होता था वह परिक्रमा करने के लिए होता था । इसको प्रदक्षिणा पथ कहते थे । वह गोल चबूतरा जिसके ऊपर स्तूप का मुख्य भाग आधारित होता था उसको मेधि कहा जाता था । स्तूप का अर्ध गोलाकार अथवा उल्टे कटोरे की तरह का ठोस भाग और अंड कहलाता था , यही स्तूप का मुख्य भाग होता था । इसका निर्माण ईटों अथवा पत्थरों से किया जाता था । स्तूप के शिखर पर अस्थिपात्र को गाड़कर रखने के लिए जो स्थान होता था उसको चौकोर वेदिका से घेर दिया जाता था जिसको हार्मिका कहते थे । हार्मिका के ऊपर यष्टि एवं छत्र बनाए जाते थे । स्तूप के शिखर पर बनी चौकोर वेदिका हर्मिका के ऊपर छत्र लगा होता था ।यह छत्र धार्मिक चिन्ह था । छत्र को सहारा देने के लिए पत्थर का जो लंबा तथा पतला स्तंभ खड़ा किया जाता था उसको यष्टि कहते थे । स्तूप के ऊपर जाने के लिए मेधि पर चढ़ने उतरने के लिए जो सीढ़ियां बनाई जाती थी उनको सोपान कहते थे ।[10]

साहित्यिक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात उनके अवशेषों पर बने आठ स्तूपों को तुड़वाकर अशोक ने उनमें से अस्थि कलश

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

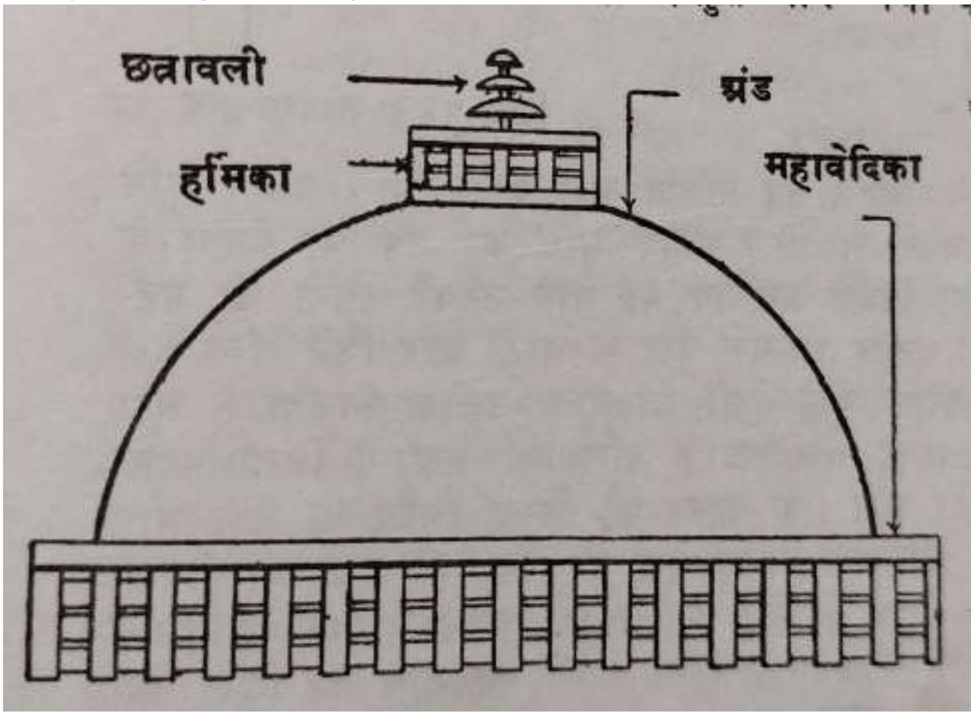

स्तूप का स्वरुप

निकलवाकर उन पर 84 हजार स्तूप बनवाएं । उसने कोलिय स्तूप को नहीं तुड़वाया । विदेशी विवरण से ज्ञात होता है कि अशोक ने बहुत से स्तूपों का निर्माण कराया था । इन स्तूपों को विदेशी पर्यटकों ने भी देखा था। इनमें सारनाथ ,पिपरहवा ,बोधगया, भरहुत, सांची आदि हैं। कुछ संशोधनों के साथ ये स्तूप आज भी विद्यमान हैं। इनमें पहले मिट्टी ,ईट और लकड़ी का प्रयोग किया गया। बाद में पाषाण का इस्तेमाल किया गया। हर्मिका में पहले एक छत्र था, बाद में इनकी संख्या 3 या 7 हो गई । तोरण संभवत पहले लकड़ी के बने होंगे , बाद में उनको पाषाण से निर्मित किया गया।

शुंग काल में यद्यपि कोई नया स्तूप नहीं बनवाया गया , पहले से निर्मित स्तूपों को नवीन रूप प्रदान किया गया। स्तूपों में एक नया अंग जोड़ा गया जिसे मेधि कहा जाता था। बीच के बने अंड को बड़ा और ऊंचा किया गया । मेधि के बाद प्रदक्षिणा पथ होता था। शुंग काल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लोक कलाकारों ने स्तूपों को लोक जीवन ,लोक धर्म और बौद्ध धर्म के अनुसार अलंकृत किया।

प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व से तीसरी शताब्दी ईस्वी तक दक्षिण पूर्वी भारत में आंध्र सातवाहन वंश के शासनकाल में नागार्जुनकोंड ,भट्टीप्रोलू, गुड़ीवाड़ा, अमरावती आदि अनेक स्थानों पर स्तूपों का निर्माण हुआ जिनमें अमरावती का स्तूप सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसमें परंपरा से हटकर कुछ विशेषताओं का समावेश किया गया है।अंड की मेधि में चारों ओर प्रक्षेपण निर्मित किए गए हैं। मेधि के बाहर यह चबूतरे की भांति निकले होते हैं। इन पर पांच स्तंभ बाहरी किनारे पर गाड़े जाते थे ।उनके ऊपर स्तूपिका निर्मित होती थी । इस नए भाग को आयक मंच कहते हैं। इनके ऊपर गड़े स्तंभों को आयकस्तंभ कहा गया ।पांचो आयक स्तंभ पांच ध्यानी बुद्ध माने गए हैं । उनके सामने शिलापट्टों पर बुद्ध य नागराज की मूर्तियां अंकित की जाती थीं । आयक मंच पुष्प चढ़ाने के लिए होता था । पहले की अपेक्षा स्तूप अब बड़े निर्मित

होने लगे अमरावती स्तूप के अंड और वेदिका संगमरमर पत्थर के बने हैं। इसमें तोरण द्वार नहीं बने हैं।[11]

कुषाण काल में कनिष्क के समय में स्तूपों में तक्षशिला, पुष्कलावती, कपिशा, वहलीक आदि प्रमुख स्थानों पर स्तूपों का निर्माण हुआ। कनिष्क ने गंधार स्तूप का भी विस्तार कराया। गुप्त काल में दो स्तूपों का निर्माण हुआ। सारनाथ का धमेख स्तूप और राजगृह का जरासंध की बैठक। मीरपुर खास (पाकिस्तान)से भी स्तूप प्राप्त हुआ है जो गुप्त काल में निर्मित है गुप्त काल में नक्काशीदार ईटों का प्रयोग होने लगा था। मीरपुर खास का स्तूप एक चबूतरे पर निर्मित है। सारनाथ का स्तूप बिना किसी आधार के है। इसके बाद स्तूप निर्माण नहीं किया गया क्योंकि इसके बाद का कोई स्तूप देखने को नहीं मिलता।

प्राचीन भारत में निर्मित स्तूपों के विस्तार का क्षेत्र भारत का पश्चिमोत्तर भाग , मध्य भारत व दक्षिण भारत रहे हैं। पश्चिमोत्तर में प्राचीन गांधार क्षेत्र, पंजाब, हरियाणा के क्षेत्र मध्य भारत में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश , बिहार व दक्षिण में आंध्र प्रदेश में कृष्णा व गोदावरी नदियों की घाटी या वेंगी क्षेत्र में व कर्नाटक के कुछ क्षेत्रों में प्राचीन स्तूप मिलते हैं। गांधार क्षेत्र में धर्मराजिका का स्तूप , तख्ते वाही स्तूप वर्तमान में पाकिस्तान में है। तख्तेवाही स्तूप मर्दन नामक स्थान पर स्थित है। इस स्तूप को 1980 में विश्व धरोहर स्थल घोषित किया गया था। धर्मराजिका स्तूप अशोक द्वारा निर्मित है। मध्य भारत में सांची, भरहुत के स्तूप , धमेख,चौखंडी ,पिपरहवा के स्तूप उत्तर प्रदेश में व बिहार में महाबोधि मंदिर स्तूप , बोधगया में और केसरिया स्तूप स्थित है। केसरिया स्तूप विश्व का सबसे बड़ा और सबसे ऊंचा स्तूप है जो चंपारण में है। दक्षिण भारत में अमरावती स्तूप, नागार्जुनकोंडा स्तूप,भट्टी प्रोलू स्तूप महत्वपूर्ण हैं।भरहुत स्तूप, मध्य प्रदेश के

साँची स्तूप

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

सतना जिले में स्थित है ,जो अब पूर्णतया नष्ट हो चुका है। सर अलेक्जेंडर कनिंघम ने इस स्थल की खोज 1873 में की थी । भरहुत स्तूप की वेदिका के कुछ अंश संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। इसकी वेदिका में तीन चार स्थलों पर स्तूप के अंडभाग की मूल आकृति अंकित है जिसके आधार पर इसके वास्तविक स्वरूप के विषय में अनुमान लगाया जा सकता है। स्तूप का आकार अर्ध गोलाकार है।

भरहुत के अवशेषों से प्राप्त वेदिका स्तंभ, सूचियाँ और तोरण इसकी कलात्मक समृद्धि को प्रदर्शित करते हैं ।यहां की मूर्तिकला मुख्यतः लाल बलुआ पत्थर पर उत्तीर्ण है । भारत की कला में बुद्ध का प्रत्यक्ष मानवीय रूप न दिखाकर प्रतीक के माध्यम से उनका प्रतिनिधित्व किया गया है । बुद्ध के जीवन और उपदेशों को बोधिवृक्ष ,धर्मचक्र, पदचिन्ह , रिक्त सिंहासन तथा स्तूप जैसे प्रतीकों द्वारा व्यक्त किया गया है । वेदिका और तोरणों पर जातक कथाओं बुद्ध के जीवन प्रसंग को यक्षिणियों, पशु-पक्षियों तथा लोक जीवन के विभिन्न दृश्यों से अलंकृत किया गया है । शिलालेखों से तत्कालीन दान परंपरा तथा सामाजिक जीवन की जानकारी भी प्राप्त होती है । भरहुत स्तूप की विशेषता इसकी कलात्मक एवं प्रतीकात्मक मूर्ति कला है । इसकी कला में धार्मिक विषयों के साथ-साथ तत्कालीन समाज ,वेशभूषा, आभूषण, स्थापत्य और लोक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है । इस प्रकार भरहुत प्रारंभिक बौद्ध कला और भारतीय मूर्ति कला के विकास को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है।

सांची मध्य प्रदेश के रायसेन जिले में स्थित प्राचीन बौद्ध स्मारकों का प्रसिद्ध केंद्र है । यह विदिशा से लगभग 9 किलोमीटर की दूरी पर सांची की पहाड़ी पर स्थित है । सांची लंबे समय तक बौद्ध धर्म का महत्वपूर्ण केंद्र रहा । यहां अनेक स्तूप,मंदिर, विहार और अन्य स्थापत्य अवशेष प्राप्त हुए हैं । सांची का सबसे प्रसिद्ध स्मारक महास्तूप संख्या एक है । इसका मूल निर्माण सम्राट अशोक ने तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में ईंटों से करवाया था बाद में शुंग -सातवाहन काल में इसका विस्तार किया गया और इस पत्थर की पट्टियों से आच्छादित कर दिया गया । इसका व्यास लगभग 40 मीटर और ऊंचाई लगभग 16.50 मीटर है । स्तूप तीन वेदिकाओं से घिरा है तथा इसके चारों ओर सुंदर तोरण द्वार है । सांची के तोरणों पर बुद्ध के जीवन , जातक कथाओं ,बौद्ध धर्म से संबंधित घटनाओं तथा तत्कालीन सामाजिक जीवन के अनेक दृश्य उत्कीर्ण किए गए हैं । बुद्ध को प्रारंभिक बौद्ध कला में प्रत्यक्ष मानव रूप में ना दिखाकर प्रतीकों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है । कमल, बोधिवृक्ष ,धर्मचक्र, अशोक चक्र और रिक्त सिंहासन जैसे प्रतीक विशेष रूप से महत्वपूर्ण है ।पशु पक्षियों, पेड़ पौधों का भी सुंदर अंकन मिलता है । सांची में स्तूप संख्या दो और तीन भी महत्वपूर्ण है । स्तूप संख्या तीन के नीचे सारिपुत्र और मौदगल्ल्यायन के अस्थिअवशेष मिले हैं । सांची की कला में प्रकृति , जनजीवन और धार्मिक भावनाओं का सुंदर समन्वय दिखाई देता है इसलिए सांची स्तूप प्राचीन भारतीय स्थापत्य , मूर्ति कला और बौद्ध संस्कृति का महत्वपूर्ण उदाहरण माना जाता है।

अमरावती स्तूप आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले में कृष्णा नदी के दाहिने तट पर स्थित था । इसका प्राचीन नाम धान्यकटक था । अमरावती स्तूप पूर्ण रूप से नष्ट हो चुका है , लेकिन इसके फलक मूर्तियां और अन्य पुरावशेष विभिन्न संग्रहालयों में सुरक्षित हैं । कर्नल कॉलिंग मैकेंजी ने 1797 ईस्वी में इस स्तूप का पता लगाया था । बाद में इसके अवशेषों का सर्वेक्षण और संग्रह किया गया । अमरावती का मूल स्तूप घंटाकार था । इसके शीर्ष पर चौकोर हार्मिका और उसके बीच छत्रों से युक्त भव्य स्तंभ था । प्रदक्षिणापथ सुंदर प्रस्तर फलकों से सजाया गया था । इन फलकों पर बुद्ध के जीवन,बौद्ध प्रतीकों, जातक कथाओं तथा विभिन्न दृश्यों का कलात्मक अंकन किया गया था । प्रारंभिक काल में बुद्ध को प्रतीकों के माध्यम से

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

दर्शाया गया, जबकि बाद में उनकी मूर्तियां भी बनाई गई। अमरावती कला की प्रमुख विशेषताएं मानव आकृतियों की भावपूर्ण मुद्राएं,लचीले अंग- प्रत्यंग, अलंकरण की सादगी और सूक्ष्म शिल्प कौशल है। पशु- पक्षियों तथा लता- पुष्पों का अंकन भी अत्यंत सुंदर है। सातवाहन शासको के समय अमरावती कला ने विशेष उन्नति प्राप्त की। इस प्रकार अमरावती स्तूप दक्षिण भारत की बौद्ध कला और स्थापत्य का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

बुद्ध के जीवन और शिक्षाओं से संबंधित स्थलों को आपस में जोड़ने वाला एक विश्व स्तरीय आध्यात्मिक व पर्यटन क्षेत्र बौद्ध सर्किट है ,जिसमें सारनाथ ,कुशीनगर ,श्रावस्ती कपिलवस्तु, संकिसा ,कौशांबी के क्षेत्र आते हैं जिनमें लगभग सभी स्थलों पर छोटे-बड़े स्तूप विद्यमान है । यह सर्किट पर्यटन की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है । यह सभी स्थल बौद्ध श्रद्धालुओं की आस्था के विशेष केंद्र हैं । इन स्थलों पर श्रीलंका ,बर्मा जापान ,थाईलैंड ,भूटान व अन्य बौद्ध देशों के पर्यटक बड़ी संख्या में आते हैं । यह सभी स्थल ऐतिहासिक व पुरातात्विक दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है । यहां से बड़ी संख्या में पुरावशेष व पुरा वस्तुएं मिलती हैं । इस सर्किट का महत्व इस बात में भी है कि यह भारत की सांस्कृतिक विरासत को विश्व स्तर पर प्रस्तुत करता है और विभिन्न देशों की संस्कृतियों को आपस में जोड़ता है।

बुद्ध के जीवन और शिक्षाओं से संबंधित स्थलों को आपस में जोड़ने वाला एक विश्व स्तरीय आध्यात्मिक व पर्यटन क्षेत्र बौद्ध सर्किट है ,जिसमें सारनाथ ,कुशीनगर ,श्रावस्ती कपिलवस्तु, संकिसा ,कौशांबी के क्षेत्र आते हैं। जिनमें लगभग सभी स्थलों पर छोटे-बड़े स्तूप विद्यमान है । यह सर्किट पर्यटन की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है । यह सभी स्थल बौद्ध श्रद्धालुओं की आस्था के विशेष केंद्र हैं । इन स्थलों पर श्रीलंका ,बर्मा जापान ,थाईलैंड ,भूटान व अन्य बौद्ध देशों के पर्यटक बड़ी संख्या में आते हैं । यह सभी स्थल ऐतिहासिक व पुरातात्विक दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है । यहां से बड़ी संख्या में पुरावशेष व पुरावस्तुएं मिलती हैं । इस सर्किट का महत्व इस बात में भी है कि यह भारत की सांस्कृतिक विरासत को विश्व स्तर पर प्रस्तुत करता है और विभिन्न देशों की संस्कृतियों को आपस में जोड़ता है।

भारत और अन्य देशों में जहां बौद्ध स्तूप विद्यमान है , वहां बड़ी संख्या में पर्यटक इन स्तूपों की और आकर्षित होते हैं , जिससे अतिशय पर्यटन होने से अनेक समस्याएं होती हैं। स्मारक की सीढ़ियां, रेलिंग क्षतिग्रस्त होती हैं। पर्यटकों द्वारा अवशिष्ट कचरे से इन स्मारकों के प्रदूषित होने की समस्याएं बढ़ रही है। कभी-कभी कुछ अवांछित पर्यटक इन स्मारकों को अपनी अन्य गतिविधियों द्वारा नुकसान पहुंचाते हैं। कभी-कभी कुछ स्थलों पर पर्यटकों की संख्या क्षमता से अधिक हो जाती है, जिससे पर्यटन प्रबंधन की समस्या सामने आती हैं। जावा के बोरोबुदुर के स्तूप के दर्शन के लिए आने वाले पर्यटकों की अधिक संख्या के कारण यूनेस्को द्वारा स्तूप के लिए सुरक्षात्मक उपाय दिए गए हैं। स्तूप की संरचना को सुद्रढ़ता प्रदान करने हेतु , भूगर्भीय हलचलों से बचाव के लिए पत्थरों के बीच कंक्रीट स्लैब ,वर्टिकल एपॉक्सी तार, व क्षैतिजाकर सीसा धातु की शीट का प्रयोग किया गया है। बौद्ध स्तूपों को जो एक सर्वाधिक विकट समस्या का सामना करना पड़ता है वह है इन पवित्र धार्मिक केन्द्रों का व्यवसायीकरण। बहुत अधिक बाजार व दुकानें , तेज आवाजें,सेल्फी लेने का अत्यधिक चलन आदि गतिविधियां इन स्थलों के पवित्र वातावरण को प्रभावित करती हैं । इनके कारण आध्यात्मिक अनुभूति पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतिशय विकास व लीजिंग विवादों के कारण लुंबिनी व राम-ग्राम जैसे स्थलों पर यूनेस्को के वर्ल्ड हेरिटेज कन्वेंशन की नियमावली का पूर्णता अनुपालन नहीं हो पता है। बौद्ध स्तूपों पर अनेक विपरीत पर्यावरणीय प्रभाव भी पडते हैं। अनेक स्थल , बुनियादी सुविधाओं जैसे पर्याप्त सड़कों , विमान मार्गो से जुड़ाव की

कमी व अंतरराष्ट्रीय स्तर के होटल, धर्मशालाओं आदि के अभाव के कारण बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने में भी असमर्थ हो रहे हैं। छोटे स्तूप स्थलों पर मूलभूत सुविधाओं की कमी भी एक प्रमुख चुनौती बनी हुई है।

स्तूप बौद्ध धर्म की आस्था के महत्वपूर्ण केंद्र होने के साथ-साथ विशिष्ट पर्यटन स्थल के रूप में भी विकसित हुए , जहां बड़ी संख्या में पर्यटक आते जाते हैं।त्योहार व विशेष अवसरों पर इन बौद्ध स्थलों पर भारी भीड़ के कारण वहां के स्थानीय लोगों के जीवन पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। स्थानीय समुदाय की व्यवस्थाओं व परंपराओं में धीरे-धीरे परिवर्तन आता है और उनके भी प्रभावित होने की समस्याएं बढ़ती हैं।

विदेशी पर्यटकों के लिए पर्याप्त सुविधाओं के अभाव जैसे उड़ान सुविधाओं व उच्च स्तर के होटल की कमी के कारण बौद्ध सर्किट के पर्यटन स्थल विदेशी पर्यटकों को अपनी और आकर्षित नहीं कर पाए जिससे पर्याप्त राजस्व उत्पन्न नहीं हो पाता। विभिन्न संस्थाओं के बीच समन्वय की कमी के कारण स्तूप स्थलों के पर्यटन के विकास में बाधा देखी जा सकती है। राजनीतिक हस्तक्षेप व अनियमितताओं के कारण स्तूप प्रबंधन के विकास में बाधा उत्पन्न होती है। लुंबिनी डेवलपमेंट ट्रस्ट का विवाद इसका उदाहरण है।

बौद्ध स्तूपों के पर्यटन महत्व की वृद्धि के लिए सतत प्रबंध किया जाना आवश्यक है। इससे तात्पर्य यह है कि स्तूप स्थलों से जुड़े पर्यटन को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाए कि भारतीय - विदेशी पर्यटकों की सभी आवश्यकताएँ भी पूर्ण हो और भारतीय संस्कृति , उसके तत्व व पर्यावरण को भी कोई क्षति ना पहुंचे और आने वाली पीढियां के लिए भी यह विरासतें सुरक्षित रहें , जो भारतीय संस्कृति की पहचान है। इसके लिए कुछ बिंदुओं पर ध्यान देना आवश्यक है। स्तूपों की संरचनात्मक स्थिति , प्रदूषण , पर्यावरण परिवर्तन की नियमित निगरानी की जाए। सांची के स्तूप के लिए प्रबंधन संरचना में संरचनात्मक निगरानी की आवश्यकता को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।

स्तूप के दर्शन के लिए प्रतिदिन आने वाले पर्यटकों की सीमा निर्धारित की जानी आवश्यक है। यह इसलिए जरूरी है ताकि पर्यटकों के अतिशय भर से इन स्थलों को सुरक्षित किया जा सके। इसके लिए टाइम स्लॉट टिकट प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है ,ताकि भीड़ नियंत्रण कर एक समय पर ज्यादा लोगों को इकट्ठा होने से रोका जा सके। ऑनलाइन बुकिंग व्यवस्था लागू कर इस कार्य को व्यवस्थित किया जा सकता है।

पर्यटन की वृद्धि के लिए स्तूप स्थलों के निकट निर्माण कार्य की आवश्यकता होनी स्वाभाविक है, परंतु इस निर्माण कार्य के लिए भी कतिपय ध्यान देने योग्य कुछ महत्वपूर्ण बिंदु हो सकते हैं। यह आवश्यक है कि यह निर्माण कार्य स्तूप से उचित दूरी पर ही हो, जिससे कोई विपरीत प्रभाव स्तूप संरचना पर या उसके निकट ना हो। साथ ही बड़े विकास कार्य को करने से पूर्व विरासत प्रभाव आकलन (हेरिटेज इंपैक्ट एसेसमेंट) होना बेहद जरूरी है। यह एक ऐसी व्यवस्थित प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत किसी प्रस्तावित विकास निर्माण का पुरातात्विक , ऐतिहासिक व सांस्कृतिक धरोहर पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन किया जाता है।

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

स्तूप स्थलों के संदर्भ में तो यह व्यवस्था बहुत ही विशिष्ट है। सांची , सारनाथ आदि के स्तूप तो ए एम ए एस आर (संशोधन और मान्यता) अधिनियम 2010 के अंतर्गत केंद्रीय रूप से संरक्षित हैं। स्तूप की बाहरी दीवार या तोरण द्वार से 100 मीटर के भीतर किसी भी निजी या व्यावसायिक निर्माण की अनुमति नहीं है। विशेष परिस्थिति में राष्ट्रीय स्मारक प्राधिकरण (एन एम ए) द्वारा पुरातात्विक और विरासत प्रभाव आकलन (ए आई ए / एच आई ए) कराया जाता है। इसके अंतर्गत यह आकलन भी किया जाता है कि नवीन निर्माण कार्य या उसकी क्रियाविधि से स्तूप की संरचना को कोई नुकसान न पहुंचे। स्थलों के आध्यात्मिक वातावरण की सुरक्षा का भी ध्यान रखना जरूरी है। यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में शामिल स्तूपों के बफर जोन में कोई भी परिवर्तन करने से पूर्व भारत सरकार को यूनेस्को के पेरिस स्थित मुख्यालय में अग्रिम सूचना देनी होती है। इंटरनेशनल काउंसिल ऑन मॉन्यूमेंट एंड साइट्स (आइकोमोज) के वैश्विक मानकों के अनुसार एक रिपोर्ट यह दी जाती है जो यह प्रमाणित करती है कि विकास कार्य से स्तूप के उत्कृष्ट स्वाभाविक मूल्य को कोई ठेस नहीं पहुंचेगी। अब आवश्यकता यह है कि यह एच आई ए की व्यवस्था सभी छोटे-बड़े सभी स्तूप स्थलों पर लागू की जाए।

स्तूप स्थलों पर हरित पर्यटन या इको पर्यटन को विकसित किया जाना अपेक्षित है। निकटवर्ती हरे भरे स्थान , लैंडस्कैपिंग और प्राकृतिक वनस्पति को प्राथमिकता दी जाए जिससे अधिक हरित क्षेत्र विकसित किया जाए। प्लास्टिक पर प्रतिबंध, कचरा प्रबंधन प्रणाली , कंपोस्टिंग ,रीसाइकलिंग इकाइयों की स्थापना इस दिशा में उपयोगी कदम हो सकती है। वर्षा जल संचयन, सोलर पैनलिंग,सोलर लाइट,पर्यावरण अनुकूल परिवहन व्यवस्था की आवश्यकता इन क्षेत्रों में सतत विकास की प्रक्रिया को गति दे सकती है। पर्यावरण अनुकूल आवास के लिए स्थानीय सामग्री से बने हट, होमस्टे व ध्यान केंद्र बनाए जाए। स्तूप स्थलों के निकट निवास करने वाले स्थानीय समुदायों की सहभागिता भी सुनिश्चित की जाए। स्थानीय लोगों को इससे टूरिस्ट गाइड ,परिवहन व भोजन व्यवस्था आदि के क्षेत्र में रोजगार सुलभ होंगे। ऑर्गेनिक खेती व एग्रो टूरिज्म को विकसित किया जाना उपयोगी होगा। पर्यटकों की जानकारी के लिए डिजिटल तकनीकी के उपयोग में वृद्धि करने आवश्यक है जैसे बहुभाषीय श्रव्य गाइड , डिजिटल मैप आदि।

जन सामान्य के बीच अपनी सांस्कृतिक धरोहर के विषय में जागरूकता बढ़ाई जानी जरूरी है। इसके लिए शिक्षा व्यवस्था में विरासत स्थलों के महत्व पर प्रकाश डालना जरूरी होगा , ताकि स्कूल - कॉलेज के विद्यार्थियों के द्वारा हेरिटेज वॉक , निर्देशित पर्यटन (गाइडेड टूर्स) के माध्यम से यह विचार प्रचारित किया जाना आवश्यक है , कि स्तूप स्थल केवल बौद्ध धर्म के केंद्र ही नहीं है , बल्कि वह जीवित सांस्कृतिक विरासत स्थल भी है।

इस उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि बौद्ध स्तूप भारतीय परंपरा व संस्कृति की महत्वपूर्ण विरासत है। यह केवल बौद्ध धर्म की आस्था के केंद्र ही नहीं है बल्कि भारत के प्राचीन इतिहास , कला, स्थापत्य, मूर्तिकला , सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन को समझने के महत्वपूर्ण पुरातात्विक साक्ष्य हैं। स्तूपों की स्थापत्य योजना व इसके विभिन्न उपरोक्त वर्णित अंगों या भागों में तत्कालीन धार्मिक विचारों व कलात्मक विकास की स्पष्ट अभिव्यंजना देखी जा सकती है। इस दृष्टि से बौद्ध स्तूप भारतीय सांस्कृतिक निरंतरता व ज्ञान परंपरा के महत्वपूर्ण प्रतीक के रूप में हमारे समक्ष प्रत्यक्ष हैं।

International Journal of Advance Interdisciplinary Research
Vol. 2, Issue 3, Part A, (July-Sept) 2026, pp. 115-127, e-ISSN: 3107-913X
DOI: https://doi.org/10.66095/ijair.2026.v2.i3.a.6

इन स्तूपों का महत्व पर्यटन की दृष्टि से भी बहुत अधिक है। सांची, सारनाथ ,भरहुत, अमरावती, नागार्जुनकोंडा, धमेख आदि के स्तूप स्थल विदेशी- देशी पर्यटकों के साथ छात्रों , शोधकर्ताओं, कला इतिहास के विशेषज्ञों को आकर्षित करते हैं। ये स्थल अंतरराष्ट्रीय बौद्ध समुदाय को भारत की बौद्ध विरासत से जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। इसे धार्मिक पर्यटन के साथ-साथ विरासत व पुरातात्विक पर्यटन का भी विस्तार होता है। यह स्तूप स्थल संबंधित स्थान पर आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहित कर आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं। यद्यपि इन स्थलों को अनेक चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ता है परंतु ऊपर बताए गए वैज्ञानिक प्रबंधन के अनेक उपायों को अपनाकर संतुलित व सतत विकास के माध्यम से एक ओर प्राचीन भारत सांस्कृतिक विरासत को भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित किया जा सकता है तो वहीं दूसरी ओर पर्यटन के माध्यम से स्थानीय व राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को भी सुद्रढ़ रूप प्रदान किया जा सकता है। अतः 'संरक्षण, संवर्धन , स्थानीय समुदाय की सहभागिता व सतत पर्यटन ' को इन बौद्ध स्तूप स्थलों के प्रबंधन के लिए मूल मंत्र बनाया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद,7/2/11
2. ऋग्वेद, 10/18/10-11
3. Coomarswamy, A.K.,History of Indian and Indonesian Art, p. 10
4. महावंश (परि. 5/176)
5. पाण्डेय.,जे.एन., भारतीय कला एवं पुरातत्व ,प्र.22
6. पाण्डेय.,जे.एन., भारतीय कला एवं पुरातत्व ,प्र.46
7. उपाध्याय, एम.के., भारतीय कला एवं स्थापत्य, प्र. 69-70
8. पाण्डेय.,जे.एन., भारतीय कला एवं पुरातत्व ,प्र.47
9. अग्रवाल, वासुदेवशरण ,भारतीय कला,प्र. 133
10. अग्रवाल, वासुदेवशरण ,भारतीय कला,प्र. 134
11. सहाय, शिवस्वरुप, प्राचीन भारतीय वास्तुकला,2010-11, 70-71